UGC Reference No. MH-15/202038/15-16/cro

हबीब तनवीर के रंगकर्म में अनुस्यूत छत्तीसगढ़ी लोक (नाचा के विशेष संदर्भ में)

A Minor Research Project

Submitted to

University Grant Commission

Principal Investigator

Dr. Vandana Kumar

Asst. Prof., Hindi

Govt. Nagarjuna P.G. Science College, Raipur, C.G.

2018

अनुक्रमणिका

हबीब तनवीर के रंगकर्म में अनुस्यूत छत्तीसगढ़ी लोक
(नाचा के विशेष संदर्भ में)

अध्याय 1 : हबीब तनवीर का ज़िंदगीनामा एवं नाट्य सफरनामा **8**

1.1 जन्म एवं पारिवारिक परिवे ा

1.2 ि ाक्षा–दीक्षा एवं व्यवसाय

1.3 दे ा–विदे ा की यात्रा, विवाह

1.4 पुरस्कार एवं सम्मान

1.5 निर्देशित नाटकों का सफरनामा

अध्याय 2 : हिंदी लोक नाट्य परंपरा और नाचा **21**

2.1 लोक नाट्य परंपरा

2.2 लोक का आशय, अर्थ एवं परिभाषा

2.3 नाट्य का आशय, अर्थ एवं परिभाशा

2.4 लोक नाट्य का आशय, अर्थ एवं परिभाशा

2.5 लोक नाट्य के विभिन्न रूप

2.6 छत्तीसगढ़ का लोक नाट्य नाचा

अध्याय 3 : हबीब तनवीर के नाटक **32**

3.1 मौलिक नाटक

3.2 अनुदित नाटक

3.3 बाल नाटक

अध्याय 4 : हबीब तनवीर के रंगकर्म में अुनस्यूत छत्तीसगढ़ी लोक **46**

4.1 कथ्य, भाशा, भौली, गीत, संगीत, नृत्य में समाया लोक

4.2 वेश–भूषा, रूप–सज्जा, रंगमंच निर्माण एवं सज्जा में समाया लोक

4.3 हबीब तनवीर के नाटकों में नाचा का रूप–विधान

अध्याय 5 : उपसंहार **79**

परिशिष्ट 1 **89**

1. साक्षात्कार

1.1 श्री वामन केन्द्रे, राश्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली के निर्दे ाक से बातचीत।

1.2 श्री देवेंद्र राज अंकुर, पूर्व निर्दे ाक, राश्ट्रीय नाट्य विद्यालय से बातचीत।

1.3 श्री आलोक चटर्जी, राश्ट्रीय नाट्य विद्यालय के अभिनेता से बातचीत।

2. फोटोग्राफ **134**

(अ) हबीब तनवीर के अभिनय करते हुए छायाचित्र

(आ) छत्तीसगढ़ के विभिन्न नाचा पार्टियों द्वारा प्रस्तुत नाचा के छायाचित्र।

(इ) विभिन्न नाट्य संस्थाओं के द्वारा नाचा एवं गम्मत के आधार पर प्रदर्शित नाटकों के छायाचित्र।

(ई) हबीब तनवीर पर समय–समय पर हुई संगोश्ठियों के छायाचित्र।

परिशिष्ट 2.

. आधार ग्रंथ 149

. संदर्भ ग्रंथ 150

. शब्दकोश 154

. पत्र–पत्रिकाएँ 155

हबीब तनवीर जी के विशाल और बेहद उजले अवदान का वस्तुनिष्ठ आकलन करने पर यह ज्ञात होता है कि आधुनिक भारतीय रंगमंच के निर्माताओं में उनका नाम स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। नेमिचंद्र जैन के अनुसार– ''जिन लोगों ने साहसपूर्वक और कल्पनाशीलता से, जोखिम उठाकर और अपनी जिद पर अड़े रहकर भारत की बीसवीं शताब्दी और उसकी आधुनिकता और सर्जनात्मकता को निर्णायक ढंग से रचा, दूसरों के लिए राह और दिशा खोली, जातीय परम्परा और आधुनिकता के द्वैत का सृजनधर्मी अतिक्रमण किया उनमें हबीब तनवीर का नाम बहुत ऊँचा वरेण्य और अविस्मरणीय है। उनका संघर्श एक स्तर पर अपने समाज के भद्रलोक और मध्यवर्ग के नकलचीपन से था तो दूसरे स्तर पर उन समकालीनों से भी, जो पश्चिम से इस कदर आक्रांत थे कि जातीय रंग परम्पराओं का उनके लिए मानों अस्तित्व ही नहीं था। रंगमच पर पश्चिमी किस्म के यथार्थवाद का आतंक एक और समस्या थी। इन सभी चुनौतियों का सामना उन्होंने बहुत दम–खम से किया और अंततः स्वयं उनकी रंग–दृश्टि, रंग व्यवहार दूसरों के लिए चुनौती बनकर उभरे। हबीब नाटक प्रस्तुत या मंचित नहीं करते थे, वे नाटक खेलते थे। वे कलाओं में लीला और क्रीड़ा की जो लम्बी भारतीय परंपरा रही है उसका उन्होंने हमारे समय के लिए पुनर्वास और पुनराविश्कार किया। उन्होंने करके दिखाया और जताया कि आधुनिकता के टीम–टाम, शिक्षा और संस्कारों से कोसों दूर रहने वाले लोक कलाकार अपनी बोली में ऐसे नाटक खेल सकते हैं जो मानवीय स्थिति और संकट, नियति और संघर्श के बारे में ऐसा कुछ चरितार्थ कर सकते हैं जो बहुत नकचढ़ी आधुनिकता का भी लक्ष्य रहा है।''[1]

सिर्फ हिंदुस्तानी रंगमंच में ही नहीं थियेटर के पूरे वि व इतिहास में ऐसे किसी रंगकर्मी की मिसाल मिलना मु कल है जिसने लगातार एक ही दि ा में एक ही तरह का और एक ही ड्रामा ग्रुप के साथ आखिर तक अदाकारों के एक ही समूह को लेकर लगभग 50 वर्षों तक रंगकर्म किया हो। हबीब तनवीर ने भ्रुरू में जिस पगडंडी पर कदम रखा था उसमें अंत समय तक चलते रहे। 'दी टेलिग्राफ' में 'सुस्मिता गुप्ता' से बात करते हुए उन्होंने कहा था कि ''मैं दे ी कला–कौ ाल और तौर–तरीकों के पक्ष में हूँ और ऐसा मैं केवल संस्कृति के क्षेत्र में नहीं वरन् कृशि, कल–कारखाने, ि ाक्षा सभी क्षेत्रों में चाहता हूँ। साथ ही संस्कृति की प्रामाणिकता में भी मेरा गहरा वि वास है।''[2]

इसी कारण वे छत्तीसगढ़ की कला और संस्कृति के साथ आजीवन जुड़े रहे और उन्होंने अपनी संस्कृति के उत्थान और उसके संरक्षण के लिए जी तोड़ मेहनत की। उनका मानना था कि ''कोई भी सच्चा रंगमंच, खासकर वह जो समाजी रूप से मानीख़ेज और कलारूप में दिलचस्प हो, संभव नहीं जब तक आदमी अपनी कला को, अपनी सांस्कृतिक परंपराओं में अवस्थित न करे।''[3] इसी कारण राडा से पढ़ कर भारत लौटने के बाद वे अपने स्थानीय देसी मुहावरे की खोज में लग गए। उन पर ब्रेश्ट के नाट्याद ार्शों का बेहद प्रभाव था।

भारतेंदु के बाद भारतीय समाज के सांस्कृतिक संघर्ष को नेतृत्व देने वाले कुछ गिने–चुने व्यक्तियों में हबीब तनवीर भी भ्रामिल थे। उन्होंने भारतेंदु का एक भी नाटक मंचित नहीं किया, फिर भी वे अपने रंगचिंतन में भारतेंदु के सर्वाधिक निकट रहे। उन्होंने लोक की व्यापक अवधारणा को अपने रंगकर्म का आधार बनाते हुए अभिव्यक्ति के नए कौ ाल के जादू से द र्काों को विस्मित किया। विस्मय अक्सर हमारी चेतना को जड़ बनाता है, पर हबीब तनवीर के रंग कौ ाल का जादू हमें इसलिए विस्मित करता है कि उनकी प्रस्तुतियों में सहजता के साथ सारे प्रपंच हमारे सामने खुलते लगते हैं, जो सदियों से मनुष्य को गुलाम बनाए रखने के लिए मनुष्य द्वारा ही रचे जा रहे हैं। इन प्रपंचों के तहख़ानों में निर्भय होकर उतरना और सारे गवाक्षों को खोलकर आवाज़ लगाना कि सत्य क्या है, आज सरल काम नहीं है। रचनाकर्म में इसके दोहरे ख़तरे होते हैं। एक तो

रचनाकर्म के ह्रास का ख़तरा हमे ा बना रहता है और दूसरी ओर प्रपंच रचनेवालों की हिंसा का सामना भी करना पड़ता है।

हबीब तनवीर जी इन दोनों ख़तरों से जूझते रहे। कलात्मकता के स्तर पर वे निरंतर उन रूढ़ियों को तोड़ते रहे, जिन्होंने आज़ादी के बाद के हिंदी रंगमंच का नैसर्गिक विकास नहीं होने दिया। तथाकथित बौद्धिकता और आभिजात्यपन की लालसा में इन रूढ़ियों के आधार पर हिदी रंगमंच का ऐसा स्वरूप उभरा, जो आज सामान्य जनता की सांस्कृतिक भूख मिटाने में सक्षम नहीं है।

तनवीर जी ने इन रूढ़ियों को तोड़ते हुए नए प्रयोग किए और प्रयोगों की सफलताओं– असफलताओं के बीच से अपनी प्रस्तुतियों के लिए नई रंगभाषा और नई रंगयुक्तियों की खोज की। उन्होंने अपने नाटकों की केंद्रीय चेतना से कभी कोई समझौता नहीं किया। अपने हर नाटक को अपने समय और समाज के प्रति उत्तरदायी बनाए रखा। समाज के सारे प्रपंचों और अंतर्द्वन्द्वों को उजागर करते हुए उस भाक्ति से कभी भयभीत नहीं हुए या समझौता नहीं किया, जो मनुष्यता के विरोध में संगठित होकर हिंसा करती है। ''हबीब साँझा संस्कृति की पक्षधरता करते रहे हैं। धार्मिक आडंबरों, बाह्यचारों, कट्टरताओं, ध्वजवाहकों की क्रूरताएँ हों या पूँजी के मद में बौराई भाक्तियों की हिंसा, हबीब तनवीर ने सबका सामना किया है। उनके रंगकर्म की आधुनिक चेतना को झुठलाने के प्रयास हुए। उन्होंने दृढ़ता से इसका सामना किया।''[4]

हबीब तनवीर के सभी नाटकों में राजनीति है, राजनीति का पक्ष है। वर्गदृष्टि है, भाोषित–पीड़ित जनता का पक्ष है। धर्मचरित्र है, भाोषकों पर हंगामा है। उन पर मजाक है, व्यंग्य है, अपने समूचे निहितार्थ में हबीब साहब के नाटक राजनीतिक रंगमंच का निर्माण करते थे।

हबीब तनवीर के रंग–व्यक्तित्व के दो पक्ष अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं, जिन्होंने उनके समूचे रंगकर्म को दि ाा–वि ोष की ओर उन्मुख कर दिया। वे दिल से भाायर थे और दिमाग़ से मानवतावादी, दिल और दिमाग़ का ये रि ता उनके समूचे रंग–चिंतन में पूरी भाक्ति के साथ उभरता है। उनके व्यक्तित्व की तीसरी वि ोषता है–कभी भी हार न मानने की ज़िद। उनकी यह ज़िद अपने रंग–बिरंगे अंदाज़ में अनेक रूपों में नज़र आती थी। उनकी यह ज़िद लचीली होते हुए भी उनके मक़सद से समझौता करने से इंकार करती रही। ज़िंदगी के अनेक मोड़ों पर उनकी इस ज़िद ने उन्हें संकट में भी डाला और उनके संघर्ष को नए तेवर भी दिए थे।

भारत रत्न भार्गव जी का विचार है कि ''हबीब तनवीर भारतीय रंगमंच के जिस मुक़ाम पर पहुँचे हैं, इसी ज़िद की बदौलत वे अपने दिल और दिमाग़ को जुझारू रखने में समर्थ हो सके। उनके व्यक्तित्व की इन तीन प्रमुख वि ोषताओं के अतिरिक्त उनके रंग–चिंतन में अन्य तत्त्वों ने योगदान नहीं दिया, लेकिन भाायद ये सारी वि ोषताएँ समय और परिस्थितियों के अनुसार उनकी परिपक्व होती जाती सोच और वि वास का संकट और दुविधापूर्ण अवसरों पर निर्णय लेने के लिए एक आंतरिक भाक्ति के रूप में कार्य करती रही है। जीवन के नित रंग बदलते अनुभवों और विडंबनापूर्ण स्थितियों में हबीब तनवीर को जिन तत्त्वों ने जीवंत और संघर्ष ाील बनाए रखने में सबसे अधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया।''[5]

हबीब तनवीर जी की रंग प्रक्रिया का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि उन्होंने विफलताओं, विरोधों और कटु–आलोचनाओं की मार सहते हुए भी अपनी रचनात्मक ज़िद नहीं छोड़ी, बल्कि अपनी विफलताओं के कारणों को बारीकी से देखते–परखते हुए उन्हें लगातार तरा ाते रहे और अंततः सफलता की राह स्वयं निर्धारित की। वे जिस ि ाखर तक पहुँचे थे, अगर पीछे मुड़कर देखा जाय तो अनेक विस्मयकारी भंगिमाएँ उभरती हैं, जो उनके व्यक्तित्व के उन पहलुओं को उजागर करती हैं, जिनका समुचित आकलन किए बिना हम

उनकी रंग–प्रक्रिया की कलात्मक विवेचना नहीं कर सकते। ''उन्होंने अपने रंग–जीवन में सौ से अधिक नाटकों का निर्दे ान किया है। यदि उनमें पंडवानी, चंदैनी, भारत–लीला, स्वांग, प्रह्लाद नाटक जैसी लोक–नाट्य भौलियों और विभिन्न प्रदे ाों के आनुष्ठानिक प्रयोगों को भी भाामिल कर लें, तो यह संख्या डेढ़ सौ से अधिक है, लेकिन इतनी बड़ी संख्या में की गई प्रस्तुतियों में सफल प्रस्तुतियों की संख्या अनुपात में बहुत कम है। इसके बावजूद इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि उनकी सफल प्रस्तुतियों का मूल्यांकन समकालीन भारतीय रंगमंच की उन उपलब्धियों की ओर इंगित करता है, जो अंतरराष्ट्रीय तथा मान्यताओं को कलात्मक चुनौती देने में समर्थ सिद्ध हुई हैं।''[6]

हबीब तनवीर की अपनी निजी जीवन यात्रा बहुत कठिन रही है। उस समय रंगकर्म करना आसान नहीं था। क्योंकि मंच की तरह चीज़ें आसानी से सुलभ नहीं थी, लेकिन अपनी ज़िद से उन्होंने इसे संभव बनाया। 20 वीं भाताब्दी में जिन लोगों ने भारतीय उपमहाद्वीप में आधुनिकता को संभव किया और आधुनिकता को संभव ही नहीं किया, दूसरों के लिए आधुनिक को संभव बनाया तथा दूसरों के लिए आधुनिक होने का रास्ता खोला। ऐसे अगर 20–30 नाम विभिन्न क्षेत्रों से लिए जाएँ तो उनमें नि चय ही हबीब तनवीर का नाम ज़रूर होगा, क्योंकि उन्होंने आधुनिक रंगमंच को लोक की हमारी अवधारणा को सीधे–सीधे मुख्य मंच पर आधुनिकता और भाास्त्रीयता की मुख्य रंगभूमि पर स्थापित किया है, जिसकी विकास की ज़रूरत थी, ये ऐतिहासिक और क्रांतिकारी काम था। ये ऐसा काम था जो सिर्फ रंगमंच तक परिसीमित नहीं था, जिसके अभिप्राय और भी निकलते रहे हैं।

अशोक वाजपेयी कहते हैं कि हबीब तनवीर ने बोली में समकालीन होना सिखाया। उन्होंने यह संभव कर दिखाया कि बोली ही समकालीनता का एक संस्करण है। समकालीन सिर्फ वो नहीं है जो तथाकथित नागरिक किस्म की आधुनिकता में जीता है। समकालीन वो है जो पहाड़ों में रहता है, जंगलों में रहता है जो समकालीन अभिप्रायों से अंजान है। तीन लोगों ने जो अलग–अलग क्षेत्रों से हैं, मध्यप्रदे ा में काम किया। सबसे क्रांतिकारी काम तो निश्चय ही हबीब तनवीर का ही है। संपूर्ण जातीय संपदा और संस्कृति, उसके बिम्ब, उसकी मुद्राएँ हैं उन सबको गूंथकर कुछ ऐसा करना जो स्थानीय भी है और जो स्थानीय से आगे भी जाना है, वो सब हबीब तनवीर ने किया।[7]

हबीब तनवीर के आलोचक अक्सर ये बात कहते थे, कि हबीब तनवीर के नाटक सिर्फ अपनी लोक शैली के दम पर टिके हैं ये इल्ज़ाम गलत और विवादास्पद हैं। हबीब तनवीर चिंतन और दृष्टिकोण से नये–नये नाटकों का मंचन करते हैं। उन्होंने राजनैतिक नाटक तथा वर्तमान स्थितियों पर नुक्कड़ नाटक भी लिखे चूँकि उनका चिंतन, उनकी सोच वहीं से उठी इसलिए राजनीतिक और सामाजिक समस्याएँ उनके नाटकों में बरबस आ ही जाती थीं। 'हिरमा की अमर कहानी' एक पूरा राजनीतिक नाटक है, 'चरणदास चोर' पूर्ण रूप से प्रशासन के खिलाफ नाटक है।

हबीब तनवीर और मोनिका मिश्रा द्वारा 'नया थियेटर' की स्थापना 1957 में की गई थी। तब से जीवन के अंत समय तक अपने तमाम संघर्षों, सफलताओं और विफलताओं के बाद भी उन्होंने गुणवत्ता की अनेक मंजिलें पार की हैं। प्रयोगधर्मी हबीब तनवीर ने अपने सभी नाटकों में रंगकर्म के प्रति अपनी गंभीरता का परिचय दिया है। 'नया थियेटर' की विकास यात्रा के तीन द ाक इसके साक्षी हैं। नाट्य आंदोलन को स ाक्त करने की दि ाा में उन्होंने लोक संस्कृति के साथ जुड़कर अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। ''छत्तीसगढ़ की लोक

संस्कृति में रचे बसे उनके नाटकों में नये प्रयोगों और नये विचारों को प्रस्तुत किया है। 'नया थियेटर' के माध्यम से उन्हें अंतर्राष्ट्रीय ख्याति व प्रतिष्ठा मिली है।''[8]

हबीब तनवीर के नया थियेटर में सीखने–सिखाने का काम एक तरफा नहीं दो तरफा था। ''दो पक्षों में एक ओर हबीब तनवीर थे, जो उच्च ि ाक्षा प्राप्त थे, जिन्होंने इंग्लैंड–योरोप में थियेटर की ि ाक्षा प्राप्त की थी, वर्षों तक पि चम की आधुनिक रंग पद्धति का अध्ययन किया, उन्हें देखा था और उनका उपयोग किया था, दूसरी ओर छत्तीसगढ़ अंचल, रायपुर ज़िले के अनपढ़ ग्रामीण जिनमें से कइयों ने पाठ ाला का मुँह भी नहीं देखा था, जो अपने गाँव के आसपास के इलाकों से बाहर नहीं गये थे, जिन्हें अपने क्षेत्र के लोक नाच–गानों के अलावा और किसी प्रकार के नाच–गाने का ज्ञान नहीं था, जो नाटक की मंचन पद्धति से सर्वथा अनभिज्ञ थे। दोनों पक्ष एक दूसरे से परिचित हुए, दोनों में आपस में टकराहट हुई, डरते–सहमते हुए ही दोनों ने एक दूसरे की ाक्ति और क्षमता को पहचाना, परस्पर निकट आते गए और धीरे–धीरे एक दूसरे के भक्त बनते गए। हबीब द्वारा चुने गये कलाकारों में अधिकां ा नाचा लोकनृत्य के नर्तक थे, अतः संगीत, लय, और अभिनय की इन्हें जानकारी होती, उनके प्रति उन्हें लगाव होता था। वे नाटक के अभ्यस्त बिल्कुल नहीं थे। नाटक का प्रवे ा और प्रस्थान आदि उनके लिए एकदम नए थे। काफी लंबे अरसे तक हबीब के साथ काम करने वाले छत्तीसगढ़ी या ट्राइबल जनजातियों के कलाकारों में भुलवाराम, फिदाबाई, देवीलाल, दीपक तिवारी, ााह नवाज और पूनमबाई आदि सभी इस बात को स्वीकार करते रहे कि हबीब तनवीर के कारण ही वे कुछ बन सके।''[9]

हबीब तनवीर जी ने रॉयल अकादमी ऑफ ड्रामैटिक आर्ट्स में तीन साल रंगमंच का अध्ययन करते हुए बिताए। इस दौरान वे यूरोप में घूमते रहे, नाटक देखते रहे। ''पि चम जाकर हबीब तनवीर अपने दे ा को ज़्यादा अच्छी तरह से पहचाना।''[10]

भारत लौटते ही उन्होंने अपने लंदन के सीखे हुए को 'अनसीखा' करना ुरू किया और इसके साथ ही उन्होंने अपने कलात्मक विकास की वह दि ाा पकड़ी जो दूसरे लंदन से सीखे निर्दे ाकों के ठीक विपरीत थी। तनवीर का वि वास गहरा हुआ था कि कोई भी सच्चा रंगमंच, खासकर वह जो समाजिक रूप से मानीखेज और कलारूप में दिलचस्प हो, संभव नहीं जब तक आदमी अपनी कला को, अपनी सांस्कृतिक परंपराओं में अवस्थित न करें।

इस गहरी समझ का परिणाम था कि उस पूरे औपनिवे ि ाक सोच को दरकिनार किया गया जो उस वक्त के रंगमंच पर हावी था। तनवीर जी ने अपने प्रद ान के एक स्थानीय दे ाी मुहावरे की लंबी खोज ुरू की। इस खोज के मुख्यतः दो स्तर हैं, जिनसे गुजरकर तनवीर जी ने वह मौजूदा मुहावरा पाया, जो उनके रंगमंच की पहचान है। इस खोज का पहला स्तर वह है "जिसमें तनवीर ने छत्तीसगढ़ी लोक कलाकारों की पारंपरिक ौली और तकनीक के साथ काम किया। यूरोप से लौटने के बाद उन्होंने पहली प्रस्तुति मिट्टी की गाड़ी (ुद्रक के संस्कृत नाटक का अनुवाद) की, जिसमें उन्होंने छः छत्तीसगढ़ी कलाकारों को रंगमंच पर उतारा। इसके अलावा इसमें लोक रंगमंच की पारंपरिक ौली और तकनीक का प्रयोग किया। "इसने पूरे नाटक को एक खास भारतीयता दी, अपने रूप और ौली में।''[11]

हबीब जी का बहुत बड़ा योगदान, जो ाायद उनके किसी भी अवदान से सबसे बड़ा है वह है, संस्कृत रंग–परंपरा को या जिसे हम बड़े परिप्रेक्ष्य में कहें कि भारतीय रंग परंपरा को देखने की समझ को विकसित करना है। उन्होंने भाास्त्र को लोक की निगाह से देखने पर बल दिया। 'बहुत सारे रंगकर्मी उसके लिए कोि ा ा कर रहे हैं, पर ाास्त्रीयता को लोक की निगाह से कैसे देखा जा सकता है और किस तरह से

बिछड़ी हुई, टूटी हुई कड़ियों को फिर से जोड़ा जा सकता है, यह बहुत महत्वपूर्ण काम हबीब तनवीर ने किया है।'[12]

सभी महत्वपूर्ण नाटककार, सभी महत्वपूर्ण रंगकर्मी, भारतीय रंगदृष्टि, भारतीय रंग परंपरा की ओर देख रहे हैं और उनमें सबसे महत्वपूर्ण और सबसे पूरी सघनता, पूरे अपनेपन और पूरा धुन, रंग धुन के साथ काम हबीब तनवीर ने किया था। ''हबीब तनवीर का ऐसा कोई नाटक नहीं है जिसके अंदर गहरी दा ार्निक पृष्ठभूमि और जद्दोजहद न दिखायी देती है। चाहे वह चरणदास चोर हो चाहे वह बहादुर कलारिन हो।"[13]

हबीब तनवीर एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न, अपनी सभ्यता और संस्कृति से गहरे रूप से संबद्ध, लोक–जीवन के प्रति प्रतिबद्ध रंगकर्मी थे। वे एक साथ कवि, नाटककार, पत्रकार, नाट्य–निर्दे ाक तथा उच्चकोटि के अभिनेता थे। उनके रंगकर्म में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक समस्याओं को चिन्हित करने के साथ–साथ अपने परिवे ा और पहचान को सुरक्षित रखने की पूरी कवायद दिखती थी। उन्होंने नाटकों में अपनी कल्पना ाीलता का प्रयोग करते हुए उसे दे ा–काल सापेक्ष बनाया और कथानक में सामाजिक चिंताओं व उपेक्षितों की आवाज़ को प्रमुखता प्रदान की। इसलिए उनके रंगकर्म को हम एक प्र नाकूल बौद्धिक मानस की वह ऊपज मान सकते हैं, जो एक स्वच्छ व स्वस्थ समाज की परिकल्पना के साथ रंगकर्म का रास्ता अख्तियार करता है। उनकी सपनीली आँखों में समूचे लोक का सपना ताँक–झाँक करता दिखाई देता है। एक सच्चे सर्जक की आँखों को यह सुहाता भी है। हबीब जी की प्रेरक प्रतिभा लोक के सपनों को मंच पर मूर्त करती रही है।

हबीब तनवीर ने भारतीय संस्कृति को समकालीनता से जोड़ते हुए लोक नाटक की बीसवीं सदी में नयी ाक्ति और ऊर्जा प्रदान की है, वे रंगधुनी थे। ''यह दुनिया और इसमें जीवन की अनंत रूपात्मकता ही सबसे बड़ा वि वविद्यालय है। जिस किसी ने इसमें दाखिला लिया, वह सही अर्थ में विद्वान हुआ। इस वि वविद्यालय से लगाव हो तो आदमी ज्ञानी और कलाकार होता है।''[14]

जीवन के ही चित्रों से खजुराहो का सौंदर्य आकार बना और ाेक्सपियर के नाटक बने। भरत ने नाट्य ाास्त्र में लोकधर्म का व्याकरण पे ा कर उसे पाँचवा वेद बना दिया। दे ा काल का रंग और अंदाज अलग–अलग पर दोनों में लोक का अनलंकृत स्वभाव। भारतीयता ने एक क्रूर राजनीतिक व्यापार का रूप ले लिया है। ऐसे में हबीब तनवीर की रची दुनिया एक वि वसनीय जवाब है। दे ा प्रेम का मर्म 'आगरा बाज़ार', 'चरण दास चोर', 'मिट्टी की गाड़ी', 'बहादुर कलारिन', 'जिन लाहौर नहीं देख्या जन्मई ही नई' जैसे नाटकों को देखकर आता है।

ऐसे भारतीय जिसमें प्रेम न हो, ऐसा स्वाभिमान जहाँ वर्चस्व का भाव हो लोक स्वभाव के अनुरूप नहीं होता। ''हबीब तनवीर के नाटक लोकधर्मी होने से ज्यादा आधुनिक धर्मी हैं और आधुनिकधर्मिता के लिए जिस–जिस चीज़ की ज़रूरत है वह उन्होंने उसमें लायी हुई है।'[15] हबीब तनवीर की रंगधर्मिता भारतीय पारंपरिक रंगकर्म की पहचान सिद्ध हुई है। ''इनकी रंगभाषा, अभिनय पद्धति, सामाजिक प्रतिबद्धता और अंततः द ार्कि पर पड़ने वाला प्रभाव, वे प्रमुख तत्व हैं, जो इनके रंगकर्म को पा चात्य रंगकर्म से पूरी तरह अलग करते हैं और अंततः आधुनिक भारतीय नाट्य–कर्म पर अपने मुहावरे की गहरी छाप छोड़ते नज़र आते हैं।'[16]

हबीब तनवीर के पास ऐसे अनेक लोग आते थे। जो उनसे अभिनय का प्रि ाक्षण लेना चाहते थे, लेकिन उनमें से अधिकां ातः उस कठोर अनु ाासन के अंतर्गत काम नहीं कर सकते, जिसके हबीब तनवीर अभ्यस्त थे, या जिनकी वे कलाकारों से अपेक्षा करते थे। "एक बड़ा कारण यह भी है कि ाहरी प्रभाव के

कारण उनमें वह खुलापन, उन्मुक्तता और सहजता नज़र नहीं आती, जो हबीब तनवीर के मुहावरे का प्राण–तत्व थी। अधिकां ा कलाकारों में लय और ताल के समुचित ज्ञान का अभाव होता, जबकि हबीब तनवीर का नाट्य–कर्म लय और ताल के बिना संभव नहीं था।''[17]

आलोचक नामवर सिंह जी लिखते है कि ''भारतीय संस्कृति के स्वरूप की सही पहचान हमें भारत के देहातों, गाँवों और कस्बों में मिलती है। यहाँ के गाँवों में ही हमें अपनी प्राचीन गौरव ाली नाट्य परंपराओं के संदर्भ मिलते हैं जो आज भी बरकरार हैं, दूसरी ओर, जब तक ाहरी युवा वर्ग के लोग पारंपरिक नाट्यरूपों से तादात्म्य स्थापित नहीं करेंगे तब तक सही मायनों में भारतीय रंगमंच, जो कि अपनी जड़ों से गहरा जुड़ा हो और साथ ही आधुनिक तथा वि वजनीन हो, स्थापित नहीं हो सकता।''[18] हबीब तनवीर के इस कथन में लोक के प्रति उनका गहरा राग छिपा हुआ है। पर इस राग में हठधर्मिता या अंध श्रद्धा नहीं है। इसमें अनुभवजनित ताप से पैदा हुई वैज्ञानिक चेतना है।''[19]

सुदीप बैनर्जी जी हबीब तनवीर के नाटकों के बारे में टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि ''हरेक चीज़ के भीतर फरेब है और जो फरेब है उसके भीतर खुबसूरती है। उनके सारे चरित्र उसमें ऐसे हैं जिसमें खूबसूरती है, बहुत आकर्षण है, उसके भीतर एक फरेब है, उसके भीतर एक जुल्म है। तो जैसे हर चीज़ में जुल्म का एक पहलू भाामिल है उनको उन्हीं भाब्दों में तो नहीं कहा पर वैसे ही हर चीज में जो खूबसूरती का जो पहलू भाामिल है यह भी लगातार उनके नाटकों में, उनकी हर चिंता में जाहिर होता है।.....हबीब साहब के नाटकों के बारे में जो क्लासिक, फोक और इस तरह की बातें की जाती हैं तो उसमें एक ही बात मैं कहना चाहता हूँ कि उनके नाटकों में क्लासिकल, फोक, कण्टेम्पोरेरी, इन सबका एक कण्टीन्युअम है..... कौन–सी चीज कब किसमें घुल–मिल जाती है या एक हो जाती हैं जिस चीज को आप तय करते हो कि यह बहुत क्लासिकल है उसी समय आपको उसमें बहुत सारी कण्टेम्पोररी चीज दिख जाती है। या कोई सी चीज से लगता है कि ये तो बिल्कुल आज की बात कर रहे हैं जैसे अभी की घटनाओं के संबंध में।..... जैसे ही आप सोचे और यह तय करने जायें कि यह नाटक जो है यह तो बिल्कुल हमारे आज के हालात पर है, तभी मालूम पड़ता है कि नहीं, यह तो बहुत बड़े परिप्रेक्ष्य में है।''[20]

हबीब तनवीर हमेशा से छत्तीसगढ़ी भाशा, संस्कृति और कला के कायल रहे हैं नाट्य लेखक विभु खरे से पूछे गए एक प्रश्न कि आपने छत्तीसगढ़ का चप्पा–चप्पा छाना है। क्या आप की कोई योजना नहीं है कि एक कथा–फिल्म या वृत्तचित्रों के माध्यम से इस अंचल की संस्कृति को पूरे दे ा के समक्ष रखा जाय ? प्रश्न का उत्तर देते हुए वे कहते हैं कि– ''एक ज़माने से मेरे दिल में खुद यह चीज़ बनी हुई है कि एक क्या, बल्कि ज़्यादा डाक्यूमेंटरी फ़िल्में बनायी जाये। फ़िलहाल मैं इस सोच में हूँ कि किस तरह से छत्तीसगढ़ की बिखरी हुई कला जो देहातों में पड़ी हुई है, उन सबको समेटकर एक बार रायपुर जैसी जगह में रंगमंच पर लाकर एक ऐसी गोश्ठी की जाये जिसमें यहाँ के और बाहर के बुद्धिजीवी जमा हों। और आपस में बातचीत करें कि कितनी जान महसूस करते है। इस कला में। उससे जो नतीजे निकलें उनसे हम फ़ायदा उठा सकते हैं कि इस डाईलेक्ट में जो कल्चर मौजूद है उसके लिए क्या कुछ किया जा सकता है और करना चाहिए।''[21]

हबीब तनवीर के नाटकों में ुद्धता पर ज़ोर नहीं है। उनमें गुजराती का भवई पुट भी है, उत्तरप्रदे ा की नौटंकी का प्रभाव भी महाराष्ट्र के तमा ाा के रे ो भी, उन्होंने नाटकों में कुछ विदे ाी भाषाओं की कविता के अनुवाद भी प्रयुक्त किये हैं। हबीब जी का मत था कि ''आधुनिकता कोई चीज़ नहीं है, जो खरीदी जा सके। उसका हमारी सामाजिक स्थिति से सीधा संबंध है और आधुनिकता ाब्द का इस्तेमाल करते समय हमें इस

बात का ध्यान रखना चाहिए। उन्होंने कहा कि कथित आधुनिकता और श्रेष्ठता का लबादा ओढ़कर हमें लोककला व संस्कृति को सँवारना है, तो उसी से जुड़कर काम करना होगा। दस–पंद्रह दिन गाँवों में या लोक के महान कलाकारों के द ान भर करा लेने से बात नहीं बनेगी। हमें उनमें घुल–मिलकर काम करना होगा, उनसे जुड़ना होगा, तभी हम कुछ कर सकते हैं।''[22]

समूचे हिंदी प्रदे ा के विभिन्न अंचलों और सुदूर क्षेत्रों की ख़ाक छानने के बाद जिस लोक–संगीत, लोक–नृत्य और आनुष्ठानिक वृत्तियों को उन्होंने अपने नाट्य– प्रयोगों का कला–सूत्र बनाया था, वे सूत्र अब धीरे–धीरे हाथ से छूटते जा रहे हैं। विकास, औद्योगीकरण या वै वीकरण की चकाचौंध में वे धीरे–धीरे तिरोहित होते जा रहे हैं। भारतीय आँचलिक जीवन पर विकास के नाम पर जो प्रभाव पड़ रहा है, उसकी सबसे बड़ी क्षति हमारी सांस्कृतिक धरोहर को होने लगी है। कारण यह है कि विकास के नाम पर सांस्कृतिक दृष्टि से गाँवों में भी विदे ाी प्रभाव की काली छाया मँडराने लगी है। स्वतंत्रता से पहले तक हमारे ग्रामीण अंचलों ने येन–केन प्रकारेण अपनी पारंपरिक सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण रखा था, लेकिन तथाकथित सभ्यता की दौड़ में उसका क्षरण आरंभ हो गया है।

''छोटे–छोटे गाँवों में फ़िल्मों की फूहड़ नक़ल ने हमारी पारंपरिक संस्कृति पर जो भरपूर वार किया है, उससे हमारी कलात्मक अस्मिता तिलमिला गई है। अब उसे रोका नहीं जा सकता। हज़ार प्रयत्नों के बावजूद आधुनिकता के नाम पर हमारे दे ा के अंचलों में ऐसी मनोवृत्ति घर करने लगी है, जो हमारी सांस्कृतिक विरासत को धूल–धूसरित करने पर आमादा नज़र आती है। हबीब तनवीर इस ख़तरे को बखूबी से समझते थे, और बार–बार इस संभावित सांस्कृतिक विभीषिका की ओर इंगित करते रहे हैं। औद्योगिक विकास और निरंतर बदलती हुई परिस्थितियों की सामाजिक अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए अपनी सांस्कृतिक विरासत को बचाये रखने के लिए वे कहते हैं।''[23] हबीब तनवीर का यह विचार एक सपना मात्र बनकर रह गया। लोक–संस्कृति और लोक–कलाएँ आज व्यापारिक प्रद ान और धनोपार्जन का माध्यम बनती जा रही हैं और बाज़ार की माँग के अनुसार उसमें सस्तापन आने लगा है।

भारतीय संस्कृति के तथाकथित उन्नायकों और भाक्ति सम्पन्न या सत्ता सम्पन्न लोगों के लिए यह प्रगति ाीलता का परिचायक हो सकता है, लेकिन इसके कारण हमारे जिन कलात्मक मूल्यों का विघटन हो रहा है, उसकी तरफ़ से वे पूरी तरह बेख़बर नज़र आते हैं। ''उपभोक्तावादी संस्कृति किस तरह हमारे दे ा की एक अमूल्य विरासत को मरणोन्मुखी कर रही है, हमारे दे ा के सांस्कृतिक सूत्रधारों को इसका एहसास नहीं है।''[24]

हबीब तनवीर नि ंचत रूप से अद्वितीय हैं। अपने रंगकर्म के माध्यम से उन्होंने भाास्त्र के ऊपर लोक को स्थापित किया और भारतीय रंगमंच को महत्त्म ऊँचाई प्रदान की। प्रयोग, प्रगति और प्रसिद्धि की छटपटाहट अगर बीसवीं सदी की पहचान रही है, तो भारत की लोक परंपराओं का विभव भी इससे अछूता नहीं रहा है। कुछ रंग बाकायदा पूरी हुमस के साथ लोक आँगन से उठकर अपने मुल्क ही नहीं, सात समंदर पार की धरती और आकाश पर बिखर गये। अपनी परंपरा को पूजने और उसे पूरी पवित्रता से सींचने का काम जिन उत्साही, रचनात्मक और संघर्शशील कलाकारों ने कठिन समय में संभव किया, उनमें श्री हबीब तनवीर को आज हम भिाखर के रूप में देख रहे हैं। हबीब तनवीर का नाम इसी कारण हमेशा याद किया जाएगा। जिस तरह विदे ाों में भारत की पहचान गाँधी जी के नाम से है उसी तरह वि व के नाट्य जगत में हबीब तनवीर के

कारण भारत की पहचान है। यह कहने में कोई अति योक्ति नहीं होगी कि हबीब तनवीर नाट्य जगत के गांधी हैं।

संदर्भ

1 जैन नेमिचन्द्र. नटरंग. संपादकीय. नयी दिल्ली, अंक 86–87 जुलाई–दिसम्बर 2010
2. दी टेलिग्राफ कलकत्ता' (5.4.1., 87)
3. (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. जावेद मलिक, हबीब तनवीर : एक गाथा पुरूश का बनना. भोपाल, अंक–103. पृश्ठ 142.
4. (सं.) सिंह, नामवर. आलोचना. हृशीके ा सुलभ. लोक की अवधारणा और हबीब तनवीर. नई दिल्ली, अंक–36. जनवरी–मार्च. 2010. पृश्ठ 66.
5. भार्गव, भारत रत्न. रंग हबीब. पृश्ठ 21.
6. वही, पृश्ठ 61.
7. (सं.)उपाध्याय, विनय. कला समय अंक–41 अगस्त–जनवरी 99–2000 बोली में भी समकालीन हैं हबीब. अशोक वाजपेयी पृश्ठ 37
8. अग्रवाल, महावीर. छत्तीसगढ़ लोक नाट्य नाचा. पृश्ठ 86.
9. (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. अभिजीत कुमार मंडल. हबीब तनवीर के रंगमंचीय आयाम. भोपाल अंक–103. पृश्ठ 151.
10 (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. हबीब तनवीर से सु ाील त्रिवेदी की बातचीत. मैंने विदे ा में अपने दे ा को पहचाना. भोपाल जनवरी, 1984 पृश्ठ 8.
11. (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. जावेद मलिक. हबीब तनवीर : एक गाथा पुरूश भोपाल. अंक–103. पृश्ठ 143
12 (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. हबीब तनवीर : एक सार्थक रंग संगोश्ठी जबलपुर 2002. भोपाल. अंक–103. पृश्ठ 214
13. (सं.) वही, पृश्ठ 216
14. (सं.) वही, पृश्ठ 215
15. (सं.) वही, पृश्ठ 218
16. भार्गव, भारत रत्न. रंग हबीब. पृश्ठ 16
17. भार्गव, भारत रत्न. रंग हबीब. पृश्ठ 220
18. सिंह, नामवर. आलोचना. हृशीकेश सुलभ लोक की अवधारणा और हबीब तनवीर, अंक–36, जनवरी–मार्च. 2010. पृश्ठ 64.
19. वही, पृश्ठ 64.
20. (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. हबीब तनवीर : एक सार्थक रंग संगोश्ठी जबलपुर 2002. भोपाल. अंक–103. पृश्ठ 223
21. अग्रवाल, प्रतिभा. हबीब तनवीर एक रंग–व्यक्त्वि. विभु कुमार द्वारा साक्षात्कार पृश्ठ 142
22. (सं.) प्रसाद, कमला. कलावार्ता. गिरीश उपाध्याय. लोककला में शिरकत हो दख़लंदाज़ी नही. भोपाल जनवरी–1984 पृश्ठ 16.
23. भार्गव, भारत रत्न. रंग हबीब. पृश्ठ 219.

24. वही, पृश्ठ 2

परिशिष्ट छायाचित्र

हबीब तनवीर के साथी कलाकार नाट्य प्रदर्शन उपरांत अभिवादन की मुद्रा में

हबीब तनवीर अभिनय करते हुए

हबीब तनवीर : वक्तव्य देते हुए

1.2.1 छत्तीसगढ़ के विभिन्न नाचा पार्टियों द्वारा प्रस्तुत नाचा के छायाचित्र।

1.2.2. नाचा के परी कलाकार नृत्य करते हुए एवं कविता वासनीक का लोक गायन

1.2.3 नाचा एवं गम्मत करते हुए कलाकार

1.2.4. नाचा एवं गम्मत करते हुए कलाकार

1.2.5 विभिन्न नाट्य संस्थाओं के द्वारा नाचा एवं गम्मत करते हुए कलाकार

1.2.6 विभिन्न नाट्य संस्थाओं के द्वारा नाचा एवं गम्मत करते हुए कलाकार

एवं नाचा की प्रस्तुति के लिए जाते हुए कलाकार

1.2.7 गम्मत

1.2.8. गम्मत एवं नाचा की प्रस्तुति के पूर्व कथा की तैयारी करते हुए कलाकार

1.2.9 नाचा गम्मत के परी कलाकार

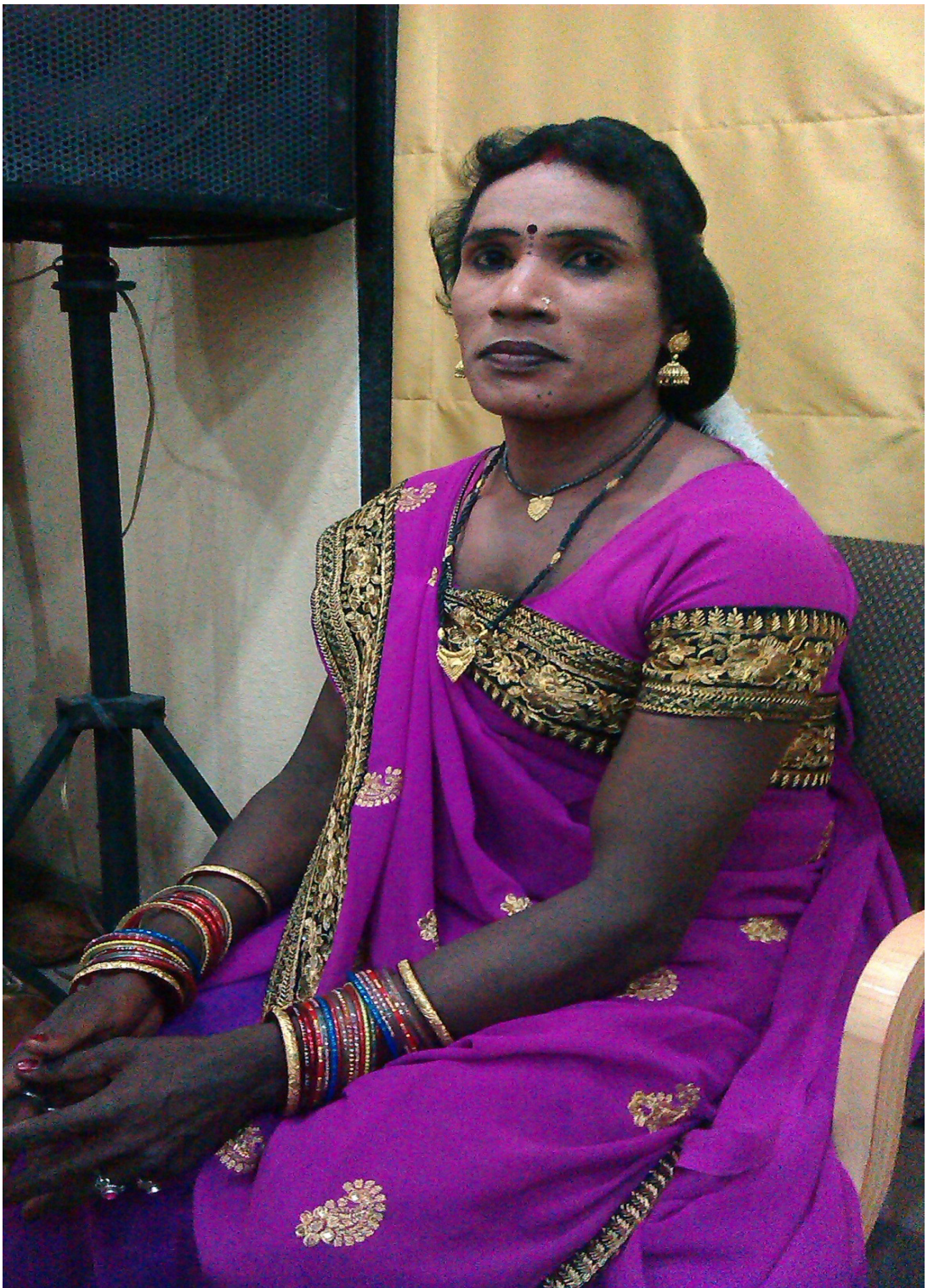

1.2.10 नाचा, गम्मत के परी कलाकार

1.2.11 नाचा का आनंद लेते हुए द र्क

1.2.12 नाचा प्रस्तुत करते हुए परी कलाकार

1.2.13

वाद्य यंत्रों में नाचा, गम्मत का संगीत प्रस्तुत करते कलाकार

1.2.14 गांव के नाम ससुराल मोर नाव दामाद हबीब जी का नाटक प्रस्तुत करते रायपुर के कलाकार

1.2.15 गांव के नाम ससुराल मोर नाव दामाद हबीब जी का नाटक प्रस्तुत करते रायपुर के कलाकार

1.2.16 गांव के नाम ससुराल मोर नाव दामाद हबीब जी का नाटक प्रस्तुत करते रायपुर के कलाकार

1.2.17 हबीब तनवीर पर समय–समय पर हुई संगोश्ठियों के छायाचित्र।

श्री जयंत दे ामुख नाट्य प्रद ान के बारे में बातचीत करते हुए

1.2.18 श्री संजय उपाध्याय राश्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली, युवा कलाकारों को लोक गीत का प्र ाक्षण देते हुए

1.2.19 छ.ग. शासन के संस्कृति विभाग के सचिव श्री राजीव श्रीवास्तव जी अपने विचार व्यक्त करते हुए।

1.2.20 डॉ. उशा आठले अपने विचार व्यक्त करते हुए।

1.2.21 श्री आलोक

चटर्जी, राश्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली नाट्य अभिनय का प्रद ान।

1.2.22 श्री आलोक चटर्जी, राश्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली नाट्य अभिनय का प्रद ान।